४७ शक्ति - पूज्य गुरूदेवश्री - समयसार सिद्धि भाग - १२

---

१. जीवत्व शक्ति:

आत्मद्रव्य के कारणभूत चैतन्यमात्र भावका धारण जिसका लक्षण अर्थात स्वरुप है ऐसी जीवत्व शक्ति है ।

* ज्ञान,दर्शन,सुख ,वीर्य प्राणको धारण करने की शक्ति यानी जीवत्व शक्ति ।
* चार भावप्राण मुख्यरूप से लिए हैं- ज्ञानप्राण , दर्शनप्राण , सुखप्राण, वीर्यप्राण ।
* समयसार में शक्ति की प्रधानता से वर्णन है। गुण परिणमन करता है वह अशुद्ध होता ही नहीं । प्रवचनसार में ज्ञान प्रधान बात है - वहां पर्याय में विकार का ज्ञान कराया है ।
* जीवत्व शक्तिमें अनंत चतुष्टय शक्तिरूप चार 'चतुष्टय शक्ति' पड़ी है ।
* ज्ञान , दर्शन ,आनंद, वीर्य जो ध्रुव स्वभाव है वह जीवत्व शक्ति का कारण और जीवत्वशक्ति द्रव्यत्व का कारण है ।
* चार भाव प्राण जीवत्व शक्ति के भेद है ।

२.चितिशक्ति:

अजड़त्व लक्षण चितिशक्ति ।(अजड़त्व अर्थात चेतनत्व जिसका रूप है ऐसी चितिशक्ति)

* वास्तवमें चितिशक्ति जिवत्वशक्ति का लक्षण है ।
* इसको भिन्न बतानेका प्रयोजन यह अजड़त्व है उसमें राग,पुण्य-पाप के जड़ भाव है ही नहीं ।
* चितिशक्ति द्रव्य, गुण , पर्याय में व्यापक है । चितिशक्ति है गुण , पर द्रव्य के ऊपर द्रष्टि करने से, शक्ति और शक्तिवान का भेद छोड़कर शक्तिवान आत्मा है ऐसी द्रष्टि करने से चितिशक्ति का पर्याय में परिणमन होता है ।
* चिति यानी चेतना । यहाँ दर्शन-ज्ञान साथ में लेना ।

३. दृशिशक्ति:

अनाकर उपयोगमयी दृशिशक्ति (जिसमें ज्ञेयरूप आकार अर्थात विशेष नहीं है ऐसी दर्शानोपयोगमयी -सत्तामात्र पदार्थ में उपयुक्त होनेरूप- दृशिशक्ति अर्थात दर्शन क्रियारूप शक्ति)

* इस गुण की पर्याय में दृशि गुण, द्रव्य और अनंति पर्याय का देखना और निराकारपने देखना होता है।
* दृशिशक्ति में द्रव्य,अनंत गुण , अनंत पर्याय देखने में आती है। परन्तु, द्रव्य,गुण , पर्याय देखने की पर्याय में आते नहीं ।

* दृशिशक्ति की पर्याय में सामान्यरूप निराकार उपयोगमें अनाकार उपयोगमय दशा हो जाती है ।
* सविकल्प (साकार) ज्ञानको दृशिशक्ति देखे तो वह साकार हो जाती है ऐसा नहीं। वह तो निराकार ही रहती है ।
* दर्शन को क्रियारूप लिया है यहाँ क्रियाशक्तिका रूप होने से अकेली निर्मल परिणति ही प्रगट होती है ।

४.ज्ञानशक्ति :

साकार उपयोगमयी ज्ञानशक्ति। (जो ज्ञेय पदार्थों के विशेषरूप आकारों में उपयुक्त होती है ऐसी ज्ञानोपयोगमयी ज्ञानशक्ति।)

* ज्ञानशक्ति स्व-पर प्रकाशक असाधारण शक्ति है ।
* ज्ञानशक्ति का परिणमन एक एक जड़ (और चेतन) द्रव्य भिन्न, गुण भिन्न ,पर्याय भिन्न, एक पर्याय के अनंत अविभाग प्रतिच्छेद भिन्न, ऐसा एक समयकी ज्ञानकी पर्याय भिन्न भिन्न जानती है ।
* अभवीको भी ज्ञान का क्षयोपशमरूप अंश है, किन्तु परिणति नहीं है । ज्ञानकी परिणति तो ज्ञानी को ही होती है ।
* ज्ञान-दर्शन की अपेक्षा से दूसरी शत्कियां अचेतन है, क्योंकि वह शक्तियां खुद को और दूसरी शक्तियों को नहीं जानती ।
* ज्ञान की पर्याय ही कारण और कार्य है । उसको ध्रुवकी भी अपेक्षा नहीं ।
* ज्ञानशक्ति में सर्वज्ञशक्ति गर्भित पड़ी है ।

५.सुखशक्ति:

अनाकुलता जिसका लक्षण अर्थात स्वरूप है ऐसी सुखशक्ति।

* सुख में ज़रा भी आकुलता नहीं । राग और पुण्य के परिणाम में आकुलता है । सुख की सब को अभिलाषा है पर सुख कहाँ है उसका पता नहीं । एक समय की क्षयोपक्षम ज्ञान की पर्याय में भी सुख नहीं ।
* सुखशक्ति से भरे हुए आत्मामें एकाग्र होने से पर्यायमें सुख की ज़नज़नाती आती है ।
* सुखका अनंत शक्तिमें रुप होनेसे अनंत शक्तिका सुख मेरी सुख शक्तिमें आता है ।
* सम्यकदर्शन की पर्याय में त्रिकालि की प्रतित करता है तब साथमें अतीन्द्रिय आनंद आता है और चारित्र होता है तब विशेष आनंद आता है , इसलिए सुखशक्तिमें श्रद्धा और चारित्र साथ में समाविष्ट कर लिए हैं (अलग से नहीं लिए) ।

६.वीर्यशक्ति :

स्वरूपकी(आत्मस्वरूपकी) रचना की सामर्थ्यरूप वीर्यशक्ति।

* आत्मा के बल का सामर्थ्य यह है की आनंद, शांति और वीतराग स्वरूप की रचना करे यह वीर्य है।
* पंचाध्यायी में आता है की परमाणु में भी वीर्यशक्ति है ।
* पुण्य - पाप की रचना करे वह आत्मा वीर्य नहीं, नपुंसक वीर्य है । उसमें से धर्म की प्रजा उत्त्पन्न होती नहीं ।
* अनंत शत्कियों की पर्याय में वीर्यशक्ति निमित्त है । उपादान से हर एक शक्ति की पर्याय अपने उपादान से होती है ।
*"चिदविलास" (ग्रन्थ) में द्रव्यवीर्य , क्षेत्रवीर्य, कालवीर्य , भाववीर्य लिए हैं । असंख्य प्रदेशमें क्षेत्रवीर्य यह सुख का स्वरूप है ।
* पर्याय पर्याय के वीर्य से और द्रव्य द्रव्य के वीर्य से रहे हुए हैं ।

७.प्रभुत्वशक्ति :

जिसका प्रताप अखंडित है अर्थात किसीसे खंडित नहीं की जा सकती ऐसी स्वातंत्र्य से (-स्वधिनतासे) शोभायमानपना जिसका लक्षण है ऐसी प्रभुत्व शक्ति ।

* आत्म द्रव्य में प्रभुत्व है । अनंत गुण है उस अनंत गुण में प्रभुत्व है ।
* तेरी प्रभुता अज्ञान और राग-द्वेष को हरे ऐसी है ।
* स्वद्रव्य के आश्रय से सम्यकदर्शनकी पर्याय प्रगट होती है उसकी प्रभुता अखंड है । उसको कोई खंड कर सके ऐसा नहीं है ।
* सम्यकदर्शन , ज्ञान , आनंदकी पर्याय अखंड प्रताप, स्वतन्त्र स्वभाव से उत्पन्न होती है ।
* पूर्ण पर्याय की अपेक्षा से अपूर्ण पर्याय पामर है ।
* तेरे द्रव्य , गुण और पर्याय की रक्षा करनेवाला तू खुद है ।

८. विभुत्वशक्ति :

सर्व भावोंमें व्यापक ऐसे एक भावरूप विभुत्वशक्ति ।(जैसे ज्ञानरुपी एक भाव सर्व भोवोंमें व्याप्त होता है ।)

* "सर्व भावोंमें" - यहाँ भाव त्रिकाली शक्ति को कहा है ।
* अनंत शक्तियों में व्यापक है यह विभु है।
* ज्ञानशक्ति, दर्शनशक्ति, आनंदशक्ति , वीर्यशक्ति सर्व भावोंमें व्यापक है ।
* विभुत्वशक्ति सर्व भोवोंमें व्यापक है तो अनंतरूप नहीं हो गई , एकरूप रही है ।

* यह शक्ति अनंत गुणोंमें व्यापक है तो अनंत पर्यायमें विभुत्वशक्ति शक्तिकी पर्याय व्यापक है ।

९. सर्वदर्शित्वशक्ति :

समस्त विश्वके सामान्य भाव को देखनेरूप (अर्थात सर्व पदार्थों के समूहरूप लोकालोक को सत्तामात्र ग्रहण करने रूपसे) परिणमित ऐसे आत्मदर्शनमयी सर्वदर्शित्वशक्ति।

* "समस्त विश्वके सामान्य भाव को" सामान्य पदार्थ । सब ' है ' इतना बस! यह आत्मा है , जड़ है , गुण है , पर्याय है । यह है ऐसा भी नहीं , परन्तु समजने के लिए ऐसा कहेना पड़े । यह सत्ता है ऐसा तो ज्ञानमें होता है , दर्शन में ऐसा नहीं ।
* समस्त विश्वको सामान्यभाव (महासत्ता) है ऐसा देखनेरूप शक्ति यह सर्वदर्शित्वशक्ति है ।
* सर्वको देखे तो वह सर्वरूप है ऐसा उपचार नहीं । वह तो आत्मदर्शनमयी है । (अपने से अपनेमें है ।)
* दर्शनशक्तिमें सर्वदर्शित्वशक्ति गर्भित पड़ी है ।
* सर्वदर्शित्व "परिणमित" हुई है । सर्वदर्शित्व अकेली पड़ी है ऐसा नहीं । परिणमित हो तब शक्ति कहनेमें आती है ।

१०.सर्वज्ञत्वशक्ति:

समस्त विश्वके विशेष भावोंको जाननेरूपसे परिणमित ऐसे आत्मज्ञानमयी सर्वज्ञत्व शक्ति ।

* श्रीमद राजचन्द्र :
-> सम्यकदर्शन होने पर श्रद्धापने केवलज्ञान हुआ ।
-> विचादशासे केवलज्ञान हुआ । ज्ञानकी पर्याय में पूरे ज्ञेय(सर्वज्ञ स्वभावकी) प्रतीति आई है ।
-> इच्छादशासे केवलज्ञान वर्त रहा है । ज्ञानी की इच्छा अब केवलज्ञान प्राप्त करनेकी है ।
*शक्ति(अभेद से शक्तिवान) के आश्रय से सर्वज्ञ पर्याय प्रगट हुई उस पर्याय को पर की अपेक्षा नहीं है । वह आत्मज्ञानमयी है ।
* अल्पज्ञपने रहना यह मेरा सामर्थ्य नहीं है । मेरा तो सर्वज्ञपने रहना यह सामर्थ्य है ।
* ज्ञानमें सर्वज्ञ की प्रतीत आने पर मुझे अल्प काल में केवलज्ञान होगा ही ऐसी प्रतीत आ जाती है । भगवानको पूछने जाना नहीं पड़ता ।
* आत्मज्ञानमयी यह निश्चय और सर्वज्ञ (सर्वको जाननेवाला) है इसलिए व्यवहार ऐसा नहीं है । दोनों एकार्थ है ।
* सर्वज्ञ में पर की अपेक्षा है ही नहीं । निश्चयसे आत्मज्ञानमयी सर्वज्ञशक्ति है । पीछे परको जाने ऐसा कहना व्यवहार है ।

११. स्वच्छत्वशक्ति:

अमूर्तिक आत्मप्रदेशोंमें प्रकाशमान लोकालोकके आकारोंसे मेचक (अर्थात अनेक आकररूप) ऐसा उपयोग जिसका लक्षण है ऐसी स्वच्छत्वशक्ति ।(जैसे दर्पण की स्वच्छत्वशक्ति से उसकी पर्याय में घटपटादि प्रकाशित होते हैं , उसी प्रकार आत्माकी स्वच्छत्वशक्ति से उसके उपयोगमें लोकालोकके आकार प्रकाशित होते हैं ।)

* अपना आत्मप्रदेश अमूर्त होने पर भी मूर्त और अमूर्त सब चीज़ोंको अपनेमें परकी अपेक्षा रखे बिना , स्वच्छता के कारणसे स्वच्छ शुद्ध परिणमन होता है ।
* लोकालोकका आकार यानि वह वस्तुएं यहाँ आती नहीं , परन्तु स्व और पर पदार्थोंका विशेष ज्ञान उसको आकर कहते हैं ।
* ज्ञानको साकार कहते हैं । दर्शन को निराकार । वह स्व-पर के विशेषरूप परिणमनको साकार कहते हैं ।
* ज्ञानकी ऐसी कोई अदभूत स्वच्छता और निर्मलता है की जिसमें लोकालोकके समस्त मूर्त-अमूर्त आकारोंका ज्ञान होता है यह स्वच्छत्वशक्ति है ।
* तेरी स्वच्छत्वशक्ति अनंत गुणोंमें निमित्त है । ज्ञान स्वच्छ , दर्शन स्वच्छ , आनंद स्वच्छ, समकीत स्वच्छ, शांति स्वच्छ, अस्तित्व स्वच्छ, वस्तुत्व स्वच्छ है ।
* तेरे ज्ञान का उपयोग केवलज्ञानमयी है ।
* प्रवचनसार गाथा १७२ - अलिंगग्रहण बोल ७ - आत्मा के उपयोगमें परज्ञेय का आलंबन नहीं ।

१२. प्रकाशशक्ति:

स्वयं प्रकाशमान विशद (-स्पष्ट) ऐसी स्वसंवेदनमयी (-स्वनुभवमयी) प्रकाशशक्ति ।

* इस शक्ति के कारण से अपनेमें अपना ज्ञान - स्वसंवेदन होता है ।
* इस शक्ति का अनंत शक्तियोंमें रूप है । मति - श्रुत ज्ञान में भी आत्माके प्रत्यक्ष होनेकी शक्ति है । परोक्ष रहना यह तेरा स्वभाव नहीं ।
* प्रवचनसार गाथा १७२ - अलिंगग्रहण बोल ६ - " आत्मा अपने स्वभाव से जाननेमें आता हुआ प्रत्यक्ष ज्ञाता है ।" वह प्रकाश शक्ति है ।
* अपने आनंद का प्रत्यक्ष अनुभव करना ऐसी शक्ति स्वयं अपनी है ।
* स्वसंवेदन में आत्मा प्रत्यक्ष हो यह तेरा स्वरूप और कार्य है ।

* तेरा आत्मा आनंदका प्रत्यक्ष वेदन करे ऐसी तेरेमें लक्ष्मी पड़ी है ।
* परलक्षका ज्ञान हुआ है वह हुआ हे तो अपने उपादान से ही , परन्तु उसमें आत्मा प्रत्यक्ष नहीं होता इसलिए वह पर्याय आत्मा की यथार्थ पर्याय नहीं है ।
* आत्मा वस्तु ही ऐसी है की जो गुप्त रह सकती नहीं । परन्तु, इस चीज़का विश्वास और अनुभव करने से प्रगट होती है ।

१३. असंकुचितविकासत्वशक्ति:

क्षेत्र और काल से अमर्यादित ऐसी चिदविलासस्वरूप (चैतन्य के विलासस्वरूप) असंकुचितविकासत्वशक्ति।

* इस शक्ति के कारण आत्मामें संकोच (कमीं) है ही नहीं । कोई भी शक्ति प्रगट करने में संकोच नहीं । पूरा द्रव्य ,पूरा क्षेत्र , पूरा काल , पूरा भाव संकोच बिना विकास होता है ।
* ज्ञान की पर्याय में उसका रूप होने से उसका संकोच बिना विस्तार होता है । उसमें क्षेत्र और काल की मर्यादा के बिना जानना होता है ।
* आनंद में भी संकोच बिना पूर्ण आनंदका विकास हो यह इसका स्वरूप है ।
* संकोच बिना पूर्ण स्वरूपकी प्रतीति करे ऐसा श्रद्धागुण में असंकुचितविकासत्व का रूप है ।
* सर्वज्ञत्व , सर्वदर्शित्व संकोच बिना द्रव्य,क्षेत्र, काल,भाव को विकास करके जानते हैं ।
* मेरा आत्मा संसार के ऊपर तिरता है ऐसा मेरा स्वभाव है ।
* सम्यकदर्शन में सर्वज्ञत्व , सर्वदर्शित्व आदि अनंत शक्तियों का पूर्ण विकास होगा ऐसी निः संदेह प्रतीति आती है ।

१४. अकार्यकारणत्वशक्ति:

जो अन्यसे नहीं किया जाता और अन्यको नहीं करता ऐसे एक द्रव्यस्वरूप अकार्यकारणत्वशक्ति , (जो अन्यका कार्य नहीं है और अन्यका कारण नहीं है ऐसा जो एक द्रव्य उस - स्वरूप अकार्यकारणत्वशक्ति ।)

* आत्मा की शक्ति तो है ही परन्तु शक्ति प्रगट हुई तब पर्याय भी पर और रागका कारण भी नहीं और कार्य भी नहीं ।
* समयसार गाथा 72 - आत्मा और समकित की पर्याय दुःख(राग) का कार्य नहीं और समकित की पर्याय राग का कारण नहीं ।
* घाती कर्म का नाश हो तो उसके कारण से केवलज्ञान होता है ऐसा नहीं ।
* आत्मा संसार की उत्पत्ति का कारण नहीं ।
* केवलज्ञान की पर्याय मोक्षमार्गके कारण से उत्त्पन्न हुई है ऐसा भी नहीं है ।
* चारित्र की पर्याय का कारण द्रव्य है वह भी व्यवहार है , ऐसा ही पर्याय का स्वभाव है यह निश्चय है ।

१५. परिणम्यपरिणामकत्वशक्ति:

पर और स्व जिनके निमित्त हैं ऐसे ज्ञेयाकारों तथा ज्ञानाकारोंको ग्रहण करनेके और ग्रहण करानेके स्वभावरूप परिणम्यपरिणामकत्वशक्ति।(पर जिनके कारण हैं ऐसे ज्ञेयाकरोंको ग्रहण करनेके और स्व जिनका कारण है ऐसे ज्ञानाकारोंको ग्रहण करानेके स्वभावरूप परिणम्यपरिणामकत्वशक्ति ।)

* परिणम्यशक्ति है वह प्रमाण है और परिणामकत्व शक्ति है वह प्रमेय है ।
* प्रमाण - पर ज्ञेयाकारोंका ज्ञान करना वह प्रमाण है ।
* प्रमेय - परको अपना ग्रहण(ज्ञान) कराना वह प्रमेय शक्ति का कार्य है ।
* अपने ज्ञान प्रमाण में पर निमित्त है और खुद परको जाननेमें निमित्त है ।
* ज्ञेयाकारोंको ग्रहण करें वह प्रमाणज्ञान , ज्ञानाकारोंको ग्रहण करें(यानि कराएं) वह प्रमेय ।
* यहाँ प्रमेय और प्रमाण दोनों मिलके एक शक्ति ली है ।
* परके साथ ज्ञाताद्रष्टा होने का मेरा स्वभाव है , परन्तु परका हो जाना यह मेरा स्वभाव नहीं ।
* भागवानने प्रवचन सर्व जीवोंकी रक्षा के लिए कहा है ऐसा कोई जिव माने वह यथार्थ नहीं । वह तो ज्ञेय है , जानने लायक है इसलिए बताया है ।
* शुभ राग धर्म तो नहीं परन्तु ज्ञान उससे जानता है ऐसा भी नहीं । अपनी पर्याय का स्व-पर प्रकाशक स्वभाव है उसको जानता है ।

१६. त्यागोपादानशून्यत्वशक्ति :

जो कम-बढ़ नहीं होता ऐसे स्वरूपमें नियत्स्वरूप (-निश्चीततया यथावत रहनेरूप-) त्यागोपादानशून्यत्वशक्ति ।

* शुद्धताकी अपूर्ण पर्याय हो तो अन्दर बहोत शुद्धता है और केवलज्ञान हुआ तो शुद्धता घट गई ऐसा नहीं । वह तो जो है वह ही है (रहती है) ।
* भगवान आत्मा ध्रूवस्वरूपसे , ज्ञायकस्वरूपसे यथास्थित रहा हुआ है ।
* पर का और राग का त्याग ग्रहण करना वस्तुमें है ही नहीं । निर्मल पर्याय का त्याग ग्रहण है ।
* शक्ति के लक्ष से जो पर्याय हुई वह भी कम-बढ़ बिना की है क्योंकि अपूर्ण पर्याय है वह पूरे द्रव्य को सिद्ध करती है । एक पर्याय को भी निकाल दो तो पर्याय का पिंड पूर्ण द्रव्य सिद्ध नहीं होता ।
* समयसार गाथा ३४ : आत्मा राग का त्यागकर्ता भी नाममात्र है । वह तो स्वरूप की स्थिरता हुई वहां राग की उत्पत्ति न हुई तो राग का त्याग किया ऐसा व्यवहार से कहने में आता है ।

१७. अगुरुलघुत्वशक्ति:

षट्स्थानपतित वृद्धिहानिरूपसे परिणमित , स्वरूप-प्रतिष्ठत्वका कारणरूप (- वस्तुके स्वरूपमें रहनेके कारणरूप) ऐसा जो विशिष्ठ (-खास) गुण हे उस- स्वरूप अगुरुलघुत्वशक्ति ।

* एक समयमें अनंत गुणकी निर्मल पर्याय में षट्गुण हानि और षट्गुण वृद्धि होती है ।
* वह केवली गम्य है । श्रुतज्ञानमें ही सब समजमें आ जाए तो केवलज्ञानकी महिमा क्या रहेगी ?
*छह प्रकार की वृद्धि : अनन्त गुण वृद्धि , असंख्य गुण वृद्धि , संख्यात गुण वृद्धि , संख्यात भाग वृद्धि ,असंख्य भाग वृद्धि तथा अनन्त भाग वृद्धि |
छह प्रकार की हानि : अनन्त भाग हानि , असंख्य भाग हानि , संख्यात भाग हानि , संख्यात गुण हानि , असंख्यात गुण हानि तथा अनन्त गुण हानि |
* १२ बोल एक समयमें एक साथ है |
* यह स्वरूप की प्रतिष्ठा है । स्वरूप का स्व-रूप ऐसा है ।
* केवलज्ञानमें ,मति-श्रुतज्ञानमें और निगोदमें अक्षरके अनंतमें भाग जितने ज्ञानमें भी षट्गुण हानि-वृद्धि है ।

१८. उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्ति:

क्रमवृत्तिरूप और अक्रमवृत्तिरूप वर्तन जिसका लक्षण है ऐसी उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्ति। (क्रमवृत्तिरूपपर्याय उत्पादव्ययरूप है और अक्रमवृत्तिरूप गुण ध्रुवत्वरूप है।)

* उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्तिके कारणसे पर्याय का उत्पाद अपनेसे होता है ।
* हर एक शक्ति का क्रम से प्रवर्तना और अक्रमसे रहेना ऐसा लक्षण-स्वरूप है ।
* वर्तमान में अनंत निर्मल पर्याय है उसके कारणसे आगे की पर्याय नहीं होती । उत्पादव्ययध्रुवत्व के रूप के कारण से पर्याय उत्पन्न होती है ।
* प्रत्येक गुण की पर्याय आत्मामें उत्पन्न होती है , पूर्वका व्यय होता है और ध्रुवता धारण करती है ।
* पंचास्तिकाय गाथा ११५:
नियत - स्वभाव वह नियत (द्रव्य और निर्मल पर्याय) , अनियत - विभाव वह अनियत , ऐसा लिया है । अनियत यानि आगे पीछे हो जाना ऐसा अर्थ नहीं लिया ।
* प्रत्येक गुण में इस शक्तिका रूप होने के कारण अपनी पर्यायमें उत्पाद होता है और पूर्वकी पर्याय का व्यय होता है ।
* प्रत्येक शक्ति उत्पादव्ययध्रुव से कार्य करती है । उसमें परद्रव्य, राग तो कारण नहीं ,परन्तु दूसरी शक्ति भी कारण नहीं ।
* प्रत्येक गुणमें उत्पाद का काल है तो ही पर्याय उत्पन्न होती है और उसमें भी द्रव्यकी द्रष्टिवंतको ही निर्मल

पर्यायका उत्पाद होता है ।
* तत्वार्थसूत्रमें उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सत् आया है वो यह शक्ति है ।
* यहाँ अक्रम - गुण लिए हैं , क्रम - पर्याय ली है ।

१९. परिणामशक्ति :

द्रव्य के स्वभावभूत ध्रौव्य-व्यय-उत्पादसे आलिंगित (- स्पर्शित) , सदृश और विसदृश जिसका रूप है ऐसे एक अस्तित्वमात्रमयी परिणामशक्ति।

* सत् द्रव्य लक्षणम् । सत् के परिणामकी व्याख्या करके अस्तित्वमयी परिणाम शक्ति का वर्णन है ।
* ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद लिया है। यह स्वभाव है इसलिए ध्रुव पहले लिया है । स्वभावभूत ध्रुव पहले सिद्ध करना है । व्यय-उत्पाद में अभाव होता है इसलिए व्यय पहले लिया है।
* ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद ये तीनोंको द्रव्य आलिंगन करता है ।
* आलिंगन का अर्थ पर्याय द्रव्य को स्पर्श करती है ऐसा नहीं । तीनों में अस्तित्वपना है। तीनों होके एक अस्तित्व है ।
* आत्मा के स्वभावभूत ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद पवित्र है ।
* समयसार गाथा ३ : प्रत्येक द्रव्य अपने धर्मोंको चुम्बता है ।
* चिद्विलास : प्रत्येक गुण के परिणाम होनेकी उत्तरअस्तित्वमयी शक्ति वह परिणाम शक्ति है ।
* शक्तिका अस्तित्व ध्रुव है और पर्याय में व्यय-उत्पादरूपी परिणमन है ,वह परिणाम शक्तिके कारण से है ।
* १८वी (उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्ति) और १९वी (परिणामशक्ति) में क्या अंतर है ? १९ में पहले ध्रुव और १८ में पहले उत्पाद लिया है । १८ में पर्याय की प्रधानता से कथन है । यहाँ ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद इस प्रकार से है, यानि परिणमन करने में उसकी ध्रुव शक्ति और परिणाम व्यय-उत्पाद से परिणमित होते हैं ऐसी एक शक्ति है । पर्याय में ऐसी परिणमन शक्ति है उसके कारण से परिणाम करती है ।
* यहाँ ध्रुव - सदृश , व्यय-उत्पाद- विसदृश हैं ।
->त्रिकाल सदृश है । व्ययका अभाव और उत्पाद का भाव वे विसदृश हैं ।
-> उत्पाद-व्यय एक जैसे नहीं है इसलिए उसको विसदृश कहा है और ध्रुव एकरूप है इसलिए उसको सदृश कहा है ।
=> रेफरन्स : धवल में उत्पाद- व्यय को विरुद्ध और ध्रौव्य को अविरुद्ध कहा है यहाँ उसको ही विसदृश और सदृश कहा है ।
* चिद्विलास : गुण परिणमते हैं इसलिए पर्याय होती है ऐसा नहीं । द्रव्य परिणमता है इसलिए पर्याय होती है , क्योंकि गुण के आश्रय से गुण नहीं है द्रव्य के आश्रय से गुण है ।
* तत्वार्थसूत्र में गुणपर्यायवत् द्रव्यम लिया है। पर्यायवत् गुण ऐसा नहीं लिया ।
* परिणमना - परिणाम होना यह अस्तित्वमात्र परिणाम शक्ति का कार्य है । यहाँ शक्ति का वर्णन है इसलिए गुणमेंसे पर्याय उठती है ऐसा कहा । वास्तवमें परिणाम द्रव्यमेंसे उठते हैं ।

रेफरन्स : पंचास्तिकाय गाथा ९ : द्रव्य गच्छति इति द्रव्यम् ।
* गुणभेद की द्रष्टि छोडके अभेद द्रव्यकी द्रष्टि करनेसे द्रव्य परिणम जाता है तब इस गुणका परिणमन हुआ ऐसा कहनेमें आता है ।

२०. अमूर्तत्वशक्ति :

कर्मबंधके अभावसे व्यक्त किये गये, सहज, स्पर्शादिशून्य (- स्पर्श , रस,गंध और वर्ण से रहित) ऐसे आत्मप्रदेशस्वरूप अमूर्तत्वशक्ति ।

* कर्मबंधन के अभावसे अमूर्तत्वशक्तिका परिणमन होता है ।
* जितना पर्याय में रागके बिलकुल संबंध बिना अपने पुरुषार्थसे कर्म का अभाव हुआ उतनी अमूर्तता व्यक्तरूपसे अंशसे प्रगट हुई । आत्मप्रदेश अरुपीका परिणमन उसमें हो गया ।
* विकारकोभी रूपी कहा है । पुद्गलके परिणाम कहे हैं । द्रव्यकी द्रष्टि होने से रागके अभावरूप अमूर्तपनेका व्यक्तरूपसे परिणमन हुआ ।
* द्रव्यकी द्रष्टि हुई और जितनी शक्तिकी व्यक्तता हुई उतने अंशमें कर्मबंधका अभाव हुआ ।

२१. अकर्तृत्वशक्ति :

समस्त, कर्मोके द्वारा किये गये ज्ञातृत्वमात्रसे भिन्न जो परिणाम उन परिणामोंके करणके उपरमस्वरूप (उन परिणामोंके करनेकी निवृत्तिस्वरूप) अकर्तृत्वशक्ति। (जिस शक्ति से आत्मा ज्ञातृत्वके अतिरिक्त , कर्मों से किये गये परिणामोंका कर्ता नहीं होता , ऐसी अकर्तृत्व नामक एक शक्ति आत्मा में है ।)

* शुभ-अशुभ राग कर्मोके निमित्त के वशसे होते हैं , वे परिणाम जानने - देखने के परिणामसे भिन्न है ।
* दया - दान के परिणाम न करना यह अकर्तृत्वशक्तिका कार्य है ।
* विकार कर्मोके निमित्त के आधीन होकर होते हैं , इसलिए कर्मों के द्वारा किये जाते हैं ऐसा कहा है ।
* ज्ञानकी हीन दशा अथवा विपरीत दशाका कर्ता ज्ञान नहीं है ।
* अकर्तृत्व अकेली अकर्तापने परिणमे ऐसा नहीं । वह गुणी अकर्ता आदि शक्तियों का पिंड जो द्रव्य है वह परिणमनेसे अकर्तृत्वशक्तिका परिणमन ज्ञाता-द्रष्टापने होता है और रागपने नहीं होता ।
* यहाँ द्रष्टि और द्रष्टिके विषय की अपेक्षा है । साथमें ज्ञान है उस अपेक्षासे आत्मा राग का कर्ता है ।

२२. अभोक्तृत्वशक्ति :

समस्त, कर्मोके किये गये, ज्ञातृत्वमात्रसे भिन्न परिणामोंके अनुभवकी (- भोक्तृत्वकी) उपरमस्वरूप अभोक्तृत्वशक्ति।

* विकारको आत्मा भोग सकता नहीं ।
* ज्ञानी रागको भोगने के काल में राग से निवृत्तस्वरूप होनेसे उसका भोक्ता नहीं ।
* रागको राग भोगता है । भोक्ताकी पर्यायमें षट्कारकरूप परिणमन विकारका है और अपनी अभोक्तृत्वशक्तिकी पर्यायमें निर्मल पर्याय का षट्कारक है ।
* अभोक्तृत्वशक्ति द्रव्य,गुण,पर्याय तीनोंमें व्यापक होती है । द्रव्य , गुण में अनादिसे है । परन्तु जब भान हुआ तब पर्यायमें अभोक्तापनेकी पर्याय आयी । ज्ञातापना कहो या रागका नहीं भोगना-अभोक्तापना कहो एकार्थ है ।

२३. निष्क्रियत्वशक्ति :

समस्त कर्मोके उपरमसे प्रवृत्त आत्मप्रदेशोंके निस्पंदता स्वरूप (-अकंपतास्वरूप) निष्क्रियत्वशक्ति। (जब समस्त कर्मोका अभाव हो जाता है तब प्रदेशोंका कंपन मिट जाता है इसलिए निष्क्रियत्वशक्ति भी आत्मामें है ।)

* सम्यक्द्रष्टिको निष्क्रियत्वशक्तिका एक अंश प्रगट है , यहाँ समस्त कर्मका अभाव लिया है ।
* निष्क्रिय अयोगपनेका अंश ४थे गुणस्थानमें प्रगट होता है।
* चार घातीकर्मोका नाश होकर चार प्रतिजिवी गुण जो प्रगट होते हैं उसका भी अंश प्रगट होता है ।
* समयसार गाथा १७६ : ४थे गुणस्थानमें क्षायिक समकितीको योगभावका एक अंश क्षय होता है ।
* रहस्यपूर्ण छिट्ठीमें सर्व सम्यकद्रष्टि (क्षायोपशमिक समकितीको भी) ज्ञानादी सर्व गुणों की एक देश व्यक्तता होती है ऐसा लिया है ।
* भगवान् आत्माका यश ऐसा है की अनंतगुणोंका पालन करे ।
* २१,२२ शक्ति में समस्त कर्मोके द्वारा होते विकारके उपरमसे अकर्ता-अभोक्ता कहा । यहाँ तो समस्त कर्मोका अभाव लिया है ।
* कर्मोके निमित्तसे जितना कंपन है उसका निष्क्रिय पर्याय में अभाव है ।
* अयोगपना १४वें गुणस्थानमें प्रगट होगा उसका एक अंश ४थे गुणस्थानमें प्रगट होता है।
* मेरु पर्वत हिल जाये तो आत्मप्रदेश हीले ऐसी निस्पंदता तेरेमें है ।
* कंपन अभी है , परन्तु उस कंपनकी पर्यायका तेरी अकंपनकी पर्यायमें अभाव है।

<u>२४. नियतप्रदेशत्वशक्ति :</u>

जो अनादी संसारसे लेकर संकोचविस्तारको प्राप्त होते हैं और जो चरम शरीर के परिणामसे कुछ न्यून परिणामसे अवस्थित होता है ऐसा लोकाकाशके माप जितना मापवाला आत्मा-अवयवत्व जिसका लक्षण है ऐसी नियतप्रदेशत्वशक्ति । (आत्माके लोकपरिणाम असंख्य प्रदेश नियत ही हैं । वे प्रदेश संसार - अवस्थामें संकोच विस्तार को प्राप्त होते हैं और मोक्ष-अवस्थामें चरम शरीर से कुछ कम परिणामसे स्थित रहते हैं ।)

* आत्मा के प्रदेश स्वयं संकोचविस्तारको प्राप्त होते हैं, परन्तु प्रदेशोंकी संख्यामें कम-बढपना होता नहीं ।
* लोकाकशमें जितने असंख्यप्रदेश हैं उतनी संख्या एक जीवके प्रदेश हैं ।
* आत्मा अवयवी है और प्रदेश अवयव है।
* एक प्रदेशमें दूसरा प्रदेश व्यापक नहीं , परन्तु एक एक प्रदेशमें अनंत गुण व्यापक है ।
* प्रवचनसार गाथा ९९ में एक प्रदेशका दुसरे प्रदेशमें अभाव कहा उसमें असंख्यप्रदेश सिद्ध करना है ।
* यहाँ गुण सिद्ध करना है इसलिए वह गुण असंख्य प्रदेशमें व्यापक कहा है ।
* अवयवमें (प्रदेश-प्रदेशमें) अनंत गुण व्यापक हैं ।
* आत्मा के प्रदेश निश्चयसे असंख्यही हैं ।(संख्या नियतही हैं ।)
* पंचास्तिकाय गाथा ३२ में निश्चयसे एक प्रदेश कहा है वहां एकरूपकी द्रष्टि करानेके लिये कहा है ।
* तेरे निज क्षेत्रमें से तो आनंद का पाक होता है ।
* संसार अवस्थामें संकोचविस्तारसे लक्षित लिया-संकोचविस्तारसे जाननेमें आये और चरम शरीरके बाद मोक्षमें उससे कुछ न्यून अवस्थति रहता है ।
* असंख्यप्रदेशकी व्यंजनपर्याय है उसमेंभी निष्क्रियता है । प्रदेश स्थिर हो गये हैं । यहाँ व्यंजन पर्यायकी मलिनता नहीं लेना है , निर्मल पर्याय ही लेनी है ।

<u>२५. सर्वधर्मव्यापकत्वशक्ति :</u>

सर्व शरिरोंमें एकस्वरूपात्मक ऐसी सर्वधर्मव्यापकत्वशक्ति। (शरीरके धर्मरूप न होकर अपने अपने धर्मोंमें व्यापनेरूप शक्ति सो सर्वधर्मव्यापकत्वशक्ति ।)

* सर्व शरिरोंमें " निगोदमें से लेकर चरम शरीरमें" सर्व शरीरोंमें छोटा-बड़ा ऐसे शरिरोंमें एकस्वरूप प्रभु है ।
* अनंत शरिरोंमें क्रमसर पलटते रहने पर भी वह तो एकस्वरूप ही है ।
* अपने निर्मल गुण और पर्याय में व्यापक है , उसको स्पर्शता है । राग को और शरीर को कभी छूता नहीं ऐसा द्रव्य स्वभाव है ।

२६. साधारण-असाधारण-साधारणासाधारणधर्मत्वशक्ति :

स्व-परके समान,असमान और समानासमान ऐसे तिन प्रकारके भावोंकी धारणस्वरूप साधारण-असाधारण-साधारणासाधारणधर्मत्वशक्ति ।

* सामान्य गुण स्व-परमें समान है उन्हें साधारण कहते हैं ।
* विशेष गुण स्व-परमें असमान है उन्हें असाधारण कहते हैं ।
* सामान्य और विशेष दोनों गुण साथमें साधारणासाधारण कहते हैं ।
* प्रवचनसार गाथा ९३ : आत्मामें चेतनगुण वह समान और असमान दोनों है । एक के सिवा दूसरे (आत्मा) में है तो उस अपेक्षा से समान कहते हैं अपितु ज्ञान है वह तो असमान विशेष है
* ये तिन प्रकार के भाव स्वरूप एक शक्ति है ।

२७. अनंतधर्मत्वशक्ति :

विलक्षण (- परस्पर भिन्न लक्षणयुक्त) अनंत स्वभावोंसे भावित ऐसा एक भाव जिसका लक्षण है ऐसी अनंतधर्मत्वशक्ति ।

* वस्तु एक , उसमें अनंत गुण , वे अनंतगुणोंको धारणकरके रखे ऐसी अनंतधर्मत्वशक्ति एक शक्ति है ।
* प्रत्येक गुण का लक्षण भिन्न भिन्न है । उससे भावित (रहनेवाला) एक भाव जिसका लक्षण है वह अनंतधर्मत्वशक्ति है ।

२८. विरुद्धधर्मत्वशक्ति :

तद्रुपमयता और अतद्रूपमयता जिसका लक्षण है ऐसी विरुद्धधर्मत्वशक्ति।

* (समयसार परिशिष्टमें) १४ बोलमें ज्ञान-ज्ञेय के बिच तत्-अतत् लिया है । ज्ञायक ज्ञायकरूप है,ज्ञान ज्ञानरूप है वह तत् और ज्ञान रागरूप नहीं, परज्ञेयरूप नहीं वह अतत् ।
* पंचाध्यायी में : तत् - पूरा द्रव्य अपने से है वह तत् है । अतत् में- परद्रव्यसे नहीं है ऐसा लिया है ।
* नित्य और तत् में क्या अंतर है? पंचाध्यायी में लिया है की 'वही का वही है ' वह तत् है और नित्य में तो ' वह है ' इतना ही लिया है । वह नित्य और तत् में भेद है ।
* अपने से है और पर से नहीं वह तो विरोध हुआ । परन्तु, वह विरुद्ध तो अपना गुण है ।
* विरुद्धधर्मत्वका अनंत शक्तियोंमें रूप है । ज्ञान ज्ञानरूपसे रहता है वह अज्ञानरूप होता नहीं । आत्मा वीतरागरूप रहता है और रागरूप होता नहीं वह तत्-अतत् ।
* अपने स्वभावकी अस्तिरूप परिणति होती है और परके अभावरुप परिणति होती है वह इस विरुद्धधर्मत्वशक्तिका कार्य है ।
* अपने अनंत गुण पर्यायसे तद्रुपमय (तन्मयरूप) परिणमन है और ज्ञेय तथा व्यवहारसे अतद्रूपमय है ।

व्यवहारमें बिलकुल तन्मय नहीं ।

२९. तत्त्वशक्ति :

तद्रूप भवनरूप ऐसी तत्त्वशक्ति (तत्स्वरुप होनेरूप अथवा तत्स्वरुप परिणमनरूप ऐसी तत्त्वशक्ति आत्मामें है । इस शक्तिसे चेतन चेतनरूपसे रहता है - परिणमित होता है।)

* जैसा ज्ञायकभाव स्वद्रव्य , स्वक्षेत्र , स्वकाल , स्वभावसे है ऐसे रूपसे परिणमन होना, भवन होना वह इस शक्तिका स्वरूप है।
* जितनी शक्तियां है उनका पर्यायमें तद्रूप (उस रूपका) परिणमन आना वह तत्त्वशक्तिका स्वरूप है ।
* वीर्य नामके गुण में तत्त्वशक्तिका रूप है। इसलिए पुरुषार्थसे परिणमन करना वह तेरा स्वरूप है।
* तत्वशक्तिमें जीवत्वशक्तिका रूप है । इसलिए तत्त्व जो ज्ञान-आनंद स्वभाव है उस रूप परिणमन करना और उस रूपसे जीना वह तेरा जीवन है।

३०. अतत्त्वशक्ति :

अतद्रूप भवनरूप ऐसी अतत्त्वशक्ति । (तत्स्वरुप नहीं होनेरूप अथवा तत्स्वरुप नहीं परिणमनेरूप अतत्त्वशक्ति आत्मामें है । इस शक्तिसे चेतन जड़रूप नहीं होता।)

* पर, रागरूप न होना, परद्रव्य-परक्षेत्र-परकाल-परभावरूप न होना वह अतत्त्व शक्ति है।
* आत्मामें ऐसी कोई शक्ति नहीं है की रागरूप, विकाररूप या मिथ्यात्वरूप हो जाय, पर्याय में उपरसे मिथ्यात्व आदिका परिणमन होता है ।
* चेतन चेतनरूपसे परिणमता है , परन्तु इस शक्तिके कारण चैतन्य जड़रूप नहीं होता।

३१. एकत्वशक्ति :

अनेक पर्यायोंमें व्यापक ऐसी एकद्रव्यमयतारूप एकत्वशक्ति ।

* अपने गुण-पर्यायोंमें व्यापकपना ऐसा एकद्रव्यमय आत्मा है ।
* अपनी अनंत पर्यायोंमें व्यापक होके प्रसरना ऐसी एकद्रव्यमय एकत्वताकी शक्ति है ।
* सर्व व्यापक अपने गुण-पर्यायमें एकद्रव्यमय एकत्वशक्ति है।

३२. अनेकत्वशक्ति :

एक द्रव्य से व्याप्य जो अनेक पर्यायें उसमयपनेरूप अनेकत्वशक्ति ।

* एक द्रव्यसे व्याप्य जो अनेक पर्याय - उसमें अनेक पर्याय सिद्ध की है ।
* अनेक पर्यायमयपनेसे अनेक है।
* अनंत भेद हैं उस-मयपने अनेकत्वशक्ति है ।
* एकशक्ति(एकत्वशक्ति) अनंत पर्यायोंमें व्यापक एक द्रव्यमयपनेकी एकशक्ति (एकत्वशक्ति) गिननेमें आयी और अनेक - एक ही द्रव्य अनंत पर्यायोंमें व्यापक होता है उस अपेक्षासे अनेकत्वशक्ति गिननेमें आयी ।

३३. भावशक्ति :

विद्यमान-अवस्थायुक्ततारूप भावशक्ति । (अमुक अवस्था जिसमें विद्यमान हो उसरूप भावशक्ति ।)

* वर्तमानमें निर्मल पर्याय होती ही है। निर्मल अवस्थाकी विद्यमानता पर्यायमें होती ही है।
* में करूँ तो निर्मल पर्याय हो , ऐसा नहीं। भावशक्ति के कारणसे निर्मल पर्याय होती है।
* भावशक्ति और शक्तिवानका जिसको अनुभव है उसको निर्मल पर्याय विद्यमान होती ही है ।
* छहो बोलोंमें (भावशक्ति से लेकर अभावाभावशक्ति तक) पर्यायकी प्रधानता से शक्तिका वर्णन किया है ।
* ज्ञान-श्रद्धा-जीवत्वमें भाव शक्तिका रूप होने से उनकी वर्तमान विद्यमान अवस्था होती ही है ।

३४. अभावशक्ति :

शून्य (-अविद्यमान) अवस्थायुक्ततारूप अभावशक्ति । (अमुक अवस्था जिसमें अविद्यमान हो उसरूप अभावशक्ति।)

* भावकर्मकी अवस्थाकी अविद्यमानतारूप अभावशक्ति है।
* ८ कर्मोंके उदयकी अवस्थाके अभावस्वभावरूप यह शक्ति है ।
* आत्माके द्रव्य,गुण और निर्मल पर्याय विकारी अवस्थाके(भावकर्म) अभावस्वभाव स्वरूप है ।
* ८ कर्मोंकी (द्रव्यकर्म) १४८ कर्म प्रकृतिकी अवस्थासे आत्मा शून्य है।
* नोकर्मकी , पांच शरिरादीकी अवस्थाके अभावस्वभाव स्वरूप आत्मा है ।
* प्रवचनसार सप्तभंगी : अपनेसे विद्यमान और परसे अविद्यमानपनेरूप ऐसा लिया है।
* जैसे नर्क में स्वर्ग के सुख की गंध नहीं , स्वर्ग में नर्क के दुःख की गंध नहीं ,सूर्यके प्रकाशमें अन्धकारका अभाव है- शून्य है, एक परमाणुमें पीड़ा का अभाव है ऐसे भगवान आत्मामें विकार और कर्मका अभाव है।
* आत्मद्रव्य इश्वरनय से अपनी पर्यायमें निमित्तआधीन होके विकाररूप होता है। ज्ञान से तो जाननेमें आता है की मेरी पर्यायमें विकृतपना है उससे मैं शुन्य नहीं, अस्ति है। वह तो ज्ञान जानता है, परन्तु द्रष्टिके विषय और द्रष्टिका कथन यहाँ चलता है तब अशुद्धताकी विद्यमानता आत्मामें है ही नहीं।

३५. भावाभावशक्ति :

भवते हुए (-प्रवर्तमान) पर्यायके व्ययरूप भावाभावशक्ति ।

* भवता हुआ भाव(अनंत गुणकी निर्मल पर्याय) उसका अभाव हो ऐसी आत्मामें शक्ति है।
* केवलज्ञानकी पर्याय भावाभावशक्तिके कारणसे पलट जाती है।
* वर्तमानकी पर्याय भविष्यकी पर्यायका कारण नहीं । भूतकालकी पर्याय वर्तमान पर्यायका कारण नहीं। वर्तमान पर्यायके व्यय होने का कारण यह शक्ति है।
* यहाँ निर्मल पर्यायके भावके अभावकी बात है।
* वर्तमान निर्मल पर्याय व्यय होके अन्दर द्रव्यमें योग्यतारूप हो गई। तथापि रागादी औदायिकभावकी पर्याय भी अन्दर जाके परिणामिकभावरूप हो गई।
* शक्तिवानको द्रष्टिमें लिया तब वर्तमान निर्मल पर्यायका अभाव करूँ ऐसा विकल्प भी नहीं है।

३६. अभावभावशक्ति :

नहीं भवते हुए (अप्रवर्तमान) पर्यायके उदयरूप अभावभावशक्ति ।

* वर्तमान में भविष्यकी पर्यायका अभाव है वह भाव (उत्पाद्) होता ही है ।
* जो पर्याय नहीं है उसका उत्पाद् इस शक्तिके कारणसे होता ही है ।
* क्षयिक समकितकी पर्यायका अभाव होने पर भी उसका उत्पाद् हो ही जायेगा। क्षयोपक्षम समकितमें क्षयिकका अभाव है फिर भी उस (क्षायिक) अभावका भाव इस शक्तिके कारणसे हो ही जायेगा ।
* कर्मके अभाव होने के कारण केवलज्ञान होता नहीं , इस शक्तिके कारण केवलज्ञान होता है ।
* समयसार गाथा ३८, प्रवचनसार गाथा ९२ : अभावशक्तिके कारणसे मिथ्यात्वका अभाव हुआ तब समकित आदि वृद्धिगत नहीं थे। वह क्षायिक समकित अभावभाव शक्तिके कारण आयेगा ही। वह(सम्यक्दर्शन) अब फिरेगा(गिरेगा) नहीं।
* वर्तमानमें अल्प निर्मल पर्याय हुई उसमेंसे विशेष पर्याय अभावभावशक्तिके कारण आएगी ही (निश्चित आएगी) । गिर जाएगी या च्युत हो जाएगी उसकी यहाँ बात ही नहीं है।
* निर्मल पर्यायका अभाव होके मिथ्यात्वकी पर्याय उत्पन्न हो ऐसा आत्मामें कोई गुण ही नहीं है ।
* मुनिको अथवा पांचवे गुणस्थानमें स्वसंवेदन वृद्धिगत होता है वह (कर्म) प्रकृतिके अभाव के कारणसे तो नहीं परन्तु कषायके (मलिनताके) अभावके कारणसे स्वसंवेदन बढ़ा ऐसा भी नहीं है । प्रकाशशक्तिमें भी अभावभावशक्ति का रूप होने के कारण स्वसंवेदन अल्प है उसमें विशेषका अभाव है वह विशेष स्वसंवेदन निश्चित आयेगा ही।

<u>३७. भावभावशक्ति :</u>
भवते हुए (प्रवर्तमान) पर्यायके भवनरूप भावभावशक्ति ।

* प्रथम द्रव्य और गुणमें जो ज्ञानभाव है उस कारणसे भी भावभावशक्ति गिनने में आई है ।
* वर्तमानमें जो भाव पर्याय है वैसी की वैसी ही उस जातकी ज्ञानकी, आनंदकी , दर्शनकी पर्याय रहेगी ही।
* अस्तित्व गुणकी वर्तमान पर्याय अस्तिरूप है वह भविष्यमें भी अस्तिरूप .... अस्तिरूप रहेगी।
* ज्ञानकी पर्याय श्रद्धारूप हो जाय और श्रद्धाकी पर्याय ज्ञानकी पर्यायरूप हो जाती नहीं है।
* शुभ रागमें भी यथाख्यात चारित्रका अंकुर(अंश) है परन्तु वह कब कार्य करे ? की जब पूर्णानंद के नाथकी अनुभव दशा प्रतीतिमें आई तब कार्य करे ।
(बनारसीदास): अगर चारित्रकी शुद्धाताका अंश पहले न हो तो शुद्धाताकी उसकी वह जात कैसे आयेगी ?

<u>३८. अभावाभावशक्ति:</u>
नहीं भावते हुए (अप्रवर्तमान) पर्याय के अभवनरूप अभावाभावशक्ति ।

* वर्तमानमें विकारके अभावरूप परिणमन है वह अभावरूप ही रहेगा वह इस शक्तिका कार्य है।
* सम्कित्की पर्यायमें मिथ्यापर्यायका अभावरूप परिणमन है, आगे भी सम्कितकी
पर्यायमें (अभावाभावशक्तिके रूप के कारण मिथ्यात्वके) अभावरूप परिणमन ही रहेगा।
* वीर्यकी पर्यायमें स्वरूपकी रचनाके भावरूप और विकारकी रचनाके अभावरूप भाव है वह अभावरूप ही रहेगा ।
* अभावाभावशक्तिमें दो उपादान है १. ध्रुव उपादान , २.क्षणिक उपादान । पर्यायमें क्षणिक उपादान और ध्रुवमें नित्य उपादान , यह शक्तिके दो रूप है ।

<u>३९. भावशक्ति :</u>
(कर्ता, कर्म आदि) कारकोंके अनुसार जो क्रिया उससे रहित भवनमात्रमयी (-होवामात्रमयी) भावशक्ति ।

* पर्यायमें विकृत अवस्थाके षट्कारकरूप परिणमन है उससे रहित परिणमना वह भावशक्तिका कार्य है।
* पर्यायमें षट्कारकसे विकृत अवस्था है वह कर्मसे और गुणसे नहीं होती । पर्यायमें षट्कारकरूप विकृत अवस्था स्वतंत्र स्वयं होती है। उससे आत्मा रहित परिणमता है।
* विपरीत राग वह शत्रु है,अनिष्ट है, उसकी परिणतिसे रहित होना वह आत्मा का गुण है।
* तेरी पर्यायमें विकृत अवस्था होने पर भी उससे रहित परिणमन करना वह तेरा स्वभाव है ।
* एक समयकी दशामें कुछ(थोड़े) गुणोंकी विपरीत अवस्थारूप पर्यायमें होना यह तेरा स्वरूप नहीं है । उससे

रहित भवन(परिणमन) होना ऐसा तेरा स्वरूप है।
* भावशक्तिका जो रागरहित क्रमवर्ती परिणमन वह क्रमवर्ती पर्याय, अक्रमवर्ती गुण और द्रव्य वे तीनों मिलके एक आत्मा है ।

४०. क्रियाशक्ति :
कराकोंके अनुसार परिणमीत होनेरूप भावमयी क्रियाशक्ति ।

* निर्मल कराकोंके अनुसार परिणमित होनेरूप भावमयी क्रियाशक्ति ।
* ३९(भावशक्ति) में कराकोंके अनुसार था वह पर्यायके विकारी कारक , यहाँ ४०(क्रियाशक्ति) में कारकोंके अनुसार वह द्रव्यके कारक लिए हैं ।
* कारकोंके अनुसारमें द्रव्यका आश्रय है(बताया है) । भगवान द्रव्यकी खानमें ६ कारक पड़े हैं । वह द्रव्यके आश्रयसे परिणमन होनेरूप भावमयी क्रियाशक्ति है।

४१. कर्मशक्ति :
प्राप्त किया जाता जो सिद्धरुप भाव उसमयी कर्मशक्ति।

* वर्तमानमें निर्मल पर्यायका कार्य होता है वह कर्मशक्तिका कार्य है।
* ध्रुवमें कर्म नामकी शक्ति है, उससे वर्तमान कार्य सुधरता है।
* मिथ्यात्वका नाश हुआ तो सम्यकदर्शन हुआ ऐसा नहीं है। श्रद्धा गुणमें कर्मशक्तिका रूप होनेके कारण सम्यकदर्शनकी पर्याय सुधरती है।
* कार्यको प्राप्त कराता हुआ जो सिद्धरूप (चोक्कसरूप) भाव उसमयी कर्मशक्ति है।

४२. कर्तृत्वशक्ति :
होनेपनरूप और सिद्धरूप भावके भावकत्वमयी कर्तृत्वशक्ति।

* होनेरूप और सिद्धरुप भाव उस भावके भावाकपनेमयी (कर्तापनेमयी) कर्तृत्वशक्ति।
* 'होनेपनरूप' - गुणकी पर्याय होनेपनरूप है और 'सिद्धरुप'- जो होनेवाली(पर्याय) है वह चोक्कस है । वो पर्याय उस समय होनेवाली सिद्धरुप है । ऐसा जो वर्तमान भाव , उसके कर्तृत्वमयी कर्तृत्वशक्ति है ।
* निश्चयसे तो कर्तृत्वशक्ति न लो तो, द्रव्य वह निर्मल पर्यायका कर्ता है।व्यवहारसे, निमित्तसे या पूर्व निर्मल पर्याय थी तो पीछे निर्मल पर्याय होगी वह यहाँ निकाल दिया है।
* एक एक पर्यायमें पर्यायका गुण कर्ता और एक एक पर्यायमें पर्याय अपनी कर्ता है।
* निर्मल पर्यायको करे ऐसा तेरेमें गुण है। विकारी पर्याय को करे ऐसा तेरमें गुण नहीं है।

४३. करणशक्ति :

भवते हुए (प्रवर्तमान) भावके भवनके (- होनेके) साधाकतमपनेमयी (-उत्कृष्ट साधकत्वमयी , उग्र साधनत्वमयी) करणशक्ति ।

* धर्मकी वीतरागी पर्याय जो सम्यक् दर्शन,सम्यक् ज्ञान आदि होनेमें कारण अन्दर करणशक्ति है।
* पंचास्तिकाय में भिन्न साधन-साध्य बताये है। वहां रागकी क्रियाकी मंदता - भिन्न साधन और निश्चय सम्यक् दर्शन,ज्ञान आदि - साध्य बताया है। वह तो निमित्तका ज्ञान करानेके लिए कहा है।
* वर्तमान निर्मल वीतरागी पर्यायके भावके होनेमें कारणरूप साधाकतमपनेमयी करणशक्ति है , उस साधकतम(निकटतम) कारणसे निर्मल पर्याय होती है।

४४. सम्प्रदानशक्ति :

अपने द्वारादिया दिया जाता जो भाव उसके उपेयत्मय (-उसे प्राप्त करनेके योग्यपनामय, उसे लेनेके पात्रपनामय) सम्प्रदानशक्ति ।

* आत्मा अपनी पर्याय अपनेको ही देता है और स्वयं खुद ही लेता है।
* आत्मा अर्थात् आत्माकी शक्तिसे देनेमें आनेवाला धर्म वह भाव है। देनेका और लेनेका यह दोनों भाव एक ही समयमें है।

४५. अपादानशक्ति :

उत्पादव्ययसे आलिंगित भावका अपाय (-हानि,नाश) होनेसे हानिको प्राप्त न होनेवाले ध्रुवत्वमयी अपादानशक्ति ।

* वर्तमान सम्यक् दर्शन,ज्ञान ,चारित्रकी वीतरागी निर्मल पर्याय वह उत्पादव्ययसे आलिंगित भाव है ।
* अपादानमें दो उपादान निकलते हैं। १.ध्रुव उपादान , २. क्षणिक उपादान।
* निर्मल पर्याय उत्पन्न हुई और नाश को प्राप्त हुई फिर भी ध्रुव उपादान कायम है।
* निर्मल पर्यायका अभाव होके वह पर्याय ध्रुवमें पारिणामिकभाव में गई है(हो गई है)।

४६. अधिकरणशक्ति :

भाव्यमान (अर्थात् भावनेमें आते हुए) भावके आधारत्वमयी अधिकरणशक्ति।

* समयसार गाथा १८१ : जाननेकी क्रियाके आधारसे आत्मा जाननेमें आता है।
* प्रवचनसार: द्रव्यके आधारसे गुण-पर्याय और गुण-पर्यायके आधारसे द्रव्य सिद्ध होता है।
* समयसार संवर अधिकार गाथा १८१में द्रव्यका आधार पर्याय लिया है।
* यहाँ आधार नामकी शक्ति है उसके आधारसे अनंत गुणकी निर्मल पर्याय उत्पन्न होती है ।

४७. संबंधशक्ति :

स्वभावमात्र स्व-स्वामित्वमयी संबंधशक्ति।

* यहाँ स्वभावमात्रमें अकेले त्रिकालीको नहीं लेना, क्योंकी स्वभावमत्रका पर्यायमें परिणमन हुआ तब यह स्व स्वभाव पूर्ण है ऐसा भान हुआ । तब उस पर्यायमें भी स्वस्वामिसंबंधकी पर्यायका अंश प्रगट होता है।
* एक एक शक्तिमें ब्रह्माण्डके भाव भरे हैं ।
*अपना द्रव्य शुद्ध है , गुण शुद्ध है , गुणमें स्व-स्वामीशक्ति भी शुद्ध है और जब शक्तियोंके धारण करनेवाले द्रव्य का पर्यायमें अनुभव हुआ तो स्व-स्वामिशक्तिका परिणमनमें अंश आया। ऐसा स्वस्वामि संबंध उसके साथ है।
*रागके साथ स्व-स्वामिका संबंध नहीं है। रागके साथ,व्यवहार रत्नत्रयके साथ ज्ञेय ज्ञायकका संबंध व्यवहारमात्र है।
* रागका स्वामि होता है वह मिथ्याद्रष्टि है।